

मध्यकालीन मुगल भारत में व्यापारिक नगरों की संरचना का अध्ययन

Jogendra

Research Scholar, Calorx Teachers' University, Ahmedabad, Gujarat

Dr. Sunil Kumar Chaturvedi

Research Supervisor, Calorx Teachers' University, Ahmedabad, Gujarat

सारांश

मध्यकालीन मुगल भारत में व्यापारिक नगर आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक गतिविधियों के प्रमुख केंद्र थे। मुगल साम्राज्य के विस्तार के साथ आंतरिक तथा अंतरक्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि हुई, जिसके परिणामस्वरूप अनेक नगरों का विकास व्यापारिक आवश्यकताओं के अनुरूप हुआ। इन नगरों की संरचना में बाजार, मंडियाँ, सराय, गोदाम, कार्यशालाएँ, आवासीय क्षेत्र, धार्मिक संस्थाएँ, प्रशासनिक भवन तथा परिवहन मार्ग महत्वपूर्ण स्थान रखते थे। आगरा, दिल्ली, लाहौर, अहमदाबाद, सूरत, बनारस और पटना जैसे नगर विभिन्न प्रकार की व्यापारिक गतिविधियों के लिए प्रसिद्ध हुए। इन नगरों का संबंध ग्रामीण उत्पादन क्षेत्रों, क्षेत्रीय बाजारों और दूरस्थ व्यापारिक केंद्रों से स्थापित था। वस्त्र, मसाले, धातु, अनाज, आभूषण, हस्तशिल्प तथा अन्य उपभोक्ता वस्तुओं का व्यापार नगरों की अर्थव्यवस्था का आधार था। व्यापारियों, साहूकारों, बिचौलियों, कारीगरों, परिवहनकर्ताओं और श्रमिकों की उपस्थिति ने इन नगरों की सामाजिक संरचना को विविध बनाया। मुगल प्रशासन द्वारा सड़कों, सरायों, सुरक्षा व्यवस्था तथा बाजारों को उपलब्ध कराया गया संरक्षण भी व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार में सहायक रहा। प्रस्तुत अध्ययन का उद्देश्य मध्यकालीन मुगल भारत के व्यापारिक नगरों की भौतिक, आर्थिक और सामाजिक संरचना का विश्लेषण करना तथा यह समझना है कि व्यापार ने इन नगरों के विकास, विस्तार और परिवर्तन को किस प्रकार प्रभावित किया।

मुख्यशब्द- मुगल भारत, मध्यकालीन नगर, व्यापारिक नगर, नगरीय संरचना, बाजार, व्यापार, मंडी, सराय, व्यापारी, साहूकार, शिल्प उत्पादन, आंतरिक व्यापार, समुद्री व्यापार, नगरीकरण।

प्रस्तावना

मध्यकालीन भारतीय इतिहास में मुगल काल राजनीतिक स्थायित्व, प्रशासनिक विस्तार, कृषि उत्पादन, शिल्प विकास और व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मुगल साम्राज्य के व्यापक क्षेत्रीय विस्तार ने विभिन्न प्रांतों, कृषि क्षेत्रों, उत्पादन केंद्रों और व्यापारिक मार्गों को एक-दूसरे से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस प्रक्रिया का प्रत्यक्ष प्रभाव नगरों के विकास पर पड़ा। विशेष रूप से वे नगर, जो प्रमुख व्यापारिक मार्गों, नदियों, बंदरगाहों, उत्पादन क्षेत्रों अथवा राजनीतिक केंद्रों के निकट स्थित थे, आर्थिक दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण होते गए। इन व्यापारिक नगरों की संरचना को समझना मध्यकालीन मुगल भारत की आर्थिक व्यवस्था और सामाजिक जीवन को समझने के लिए आवश्यक है।

मुगलकालीन व्यापारिक नगर केवल वस्तुओं के क्रय-विक्रय के स्थान नहीं थे। वे उत्पादन, वितरण, वित्त, परिवहन और उपभोग की अनेक गतिविधियों को एक साथ संचालित करने वाले जटिल आर्थिक केंद्र थे। नगरों में विभिन्न प्रकार के बाजार और मंडियाँ विकसित होती थीं, जहाँ स्थानीय तथा दूरस्थ क्षेत्रों से आने वाली वस्तुओं का आदान-प्रदान होता था। व्यापारिक नगरों में वस्त्र, अनाज, मसाले, धातु, आभूषण, चमड़ा, लकड़ी, कागज और अन्य हस्तशिल्प वस्तुओं का व्यापार होता था। कुछ नगर विशेष प्रकार के उत्पादन या व्यापार के लिए प्रसिद्ध हो गए थे। इस प्रकार प्रत्येक व्यापारिक नगर की संरचना उसके भौगोलिक स्थान, स्थानीय उत्पादन, व्यापारिक संपर्क और राजनीतिक महत्त्व से प्रभावित होती थी।

मुगल भारत के प्रमुख नगरों में आगरा का विशेष महत्त्व था। शाही राजधानी के रूप में विकसित होने के साथ-साथ आगरा एक प्रमुख व्यापारिक एवं उत्पादन केंद्र भी बना। राजधानी होने के कारण यहाँ शाही दरबार, प्रशासनिक अधिकारियों, सैनिकों, व्यापारियों और कारीगरों की बड़ी संख्या रहती थी। इससे वस्तुओं की माँग बढ़ी और बाजारों का विस्तार हुआ। इसी प्रकार दिल्ली राजनीतिक एवं आर्थिक गतिविधियों का प्रमुख केंद्र थी। लाहौर का महत्त्व उत्तर-पश्चिमी व्यापारिक मार्गों से जुड़ा था। अहमदाबाद वस्त्र उत्पादन और व्यापार के लिए प्रसिद्ध था, जबकि सूरत समुद्री व्यापार के कारण अत्यंत महत्त्वपूर्ण नगर बना। बनारस, पटना तथा अन्य नगरों ने भी क्षेत्रीय और अंतरक्षेत्रीय व्यापार में उल्लेखनीय भूमिका निभाई।

व्यापारिक नगरों की भौतिक संरचना में बाजारों का केंद्रीय स्थान था। बाजार केवल खरीद-बिक्री की जगह नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक संपर्क और आर्थिक गतिविधियों के प्रमुख केंद्र भी थे। अलग-अलग वस्तुओं और व्यवसायों के अनुसार बाजारों और गलियों का विभाजन दिखाई देता था। कारीगरों और व्यापारियों की बस्तियाँ कई बार उनके पेशे के आधार पर विकसित होती थीं। वस्त्र, धातु, आभूषण और अन्य हस्तशिल्प से जुड़े कारीगर उत्पादन और बिक्री दोनों में सक्रिय रहते थे। इस प्रकार नगरों की भौतिक संरचना आर्थिक विशेषीकरण से प्रभावित थी।

व्यापारिक नगरों की संरचना में सरायों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान था। दूर-दराज से आने वाले व्यापारी, यात्री और परिवहनकर्ता सरायों में ठहरते थे। ये स्थान व्यापारिक यात्राओं को सुविधाजनक बनाने के साथ-साथ सूचना और संपर्क के केंद्र के रूप में भी कार्य करते थे। प्रमुख मार्गों पर स्थित सरायों ने नगरों को विभिन्न क्षेत्रों से जोड़ने में सहायता की। सड़कों और परिवहन मार्गों के विकास ने व्यापारिक नगरों की आर्थिक भूमिका को और मजबूत किया। नदियों के किनारे बसे नगरों में जल परिवहन भी व्यापार का महत्त्वपूर्ण माध्यम था।

मुगलकालीन व्यापारिक नगरों में वित्तीय व्यवस्था भी विकसित थी। व्यापारी और साहूकार व्यापारिक पूँजी के संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। धन के लेन-देन, ऋण, व्यापारिक साझेदारी तथा भुगतान की विभिन्न व्यवस्थाओं ने व्यापार को गति प्रदान की। बड़े व्यापारियों और साहूकारों का आर्थिक प्रभाव नगरों की सामाजिक संरचना में भी दिखाई देता था। व्यापार से जुड़े मध्यस्थ, दलाल, परिवहनकर्ता और श्रमिक भी नगरीय अर्थव्यवस्था का अभिन्न हिस्सा थे।

इन नगरों की सामाजिक संरचना अत्यंत विविध थी। व्यापारिक गतिविधियों ने विभिन्न क्षेत्रों से लोगों के आगमन को प्रोत्साहित किया। व्यापारी समुदायों के साथ-साथ कारीगर, मजदूर, परिवहनकर्ता, प्रशासनिक कर्मचारी और धार्मिक समूह नगरों में निवास करते थे। परिणामस्वरूप व्यापारिक नगर विभिन्न भाषाओं, समुदायों और सांस्कृतिक परंपराओं के संपर्क स्थल बने। व्यापार के माध्यम से केवल वस्तुओं का ही आदान-प्रदान नहीं होता था, बल्कि विचारों, तकनीकों, सूचनाओं और सांस्कृतिक प्रभावों का भी प्रसार होता था।

मुगल प्रशासन ने भी व्यापारिक नगरों के विकास को प्रभावित किया। कानून-व्यवस्था, मार्गों की सुरक्षा, बाजारों का नियमन और कर-संग्रह जैसी व्यवस्थाएँ व्यापारिक गतिविधियों से जुड़ी थीं। शाही संरक्षण प्राप्त नगरों में निर्माण गतिविधियों के साथ आर्थिक अवसर भी बढ़ते थे। प्रशासनिक केंद्र और व्यापारिक केंद्र के बीच निकट संबंध होने के कारण अनेक नगरों का विकास राजनीतिक और आर्थिक दोनों आधारों पर हुआ।

समुद्री व्यापार से जुड़े नगरों की संरचना कुछ अलग प्रकार की थी। सूरत जैसे बंदरगाह नगरों में विदेशी और भारतीय व्यापारियों की गतिविधियाँ अधिक दिखाई देती थीं। समुद्री व्यापार ने इन नगरों को व्यापक अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक नेटवर्क से जोड़ा। बंदरगाहों पर माल के भंडारण, परिवहन, बिक्री और वितरण

से संबंधित अनेक गतिविधियाँ संचालित होती थीं। इस प्रकार समुद्री व्यापारिक नगर मुगल भारत की अर्थव्यवस्था को बाहरी बाजारों से जोड़ने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

मध्यकालीन मुगल भारत के व्यापारिक नगरों की संरचना इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि यह तत्कालीन अर्थव्यवस्था और समाज के परस्पर संबंधों को स्पष्ट करती है। नगरों का विकास किसी एक कारण का परिणाम नहीं था। भौगोलिक स्थिति, राजनीतिक संरक्षण, कृषि उत्पादन, शिल्प, व्यापारिक मार्ग, परिवहन, बाजार और सामाजिक समूहों ने मिलकर उनकी संरचना निर्धारित की। व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार के साथ नगरों में नई बस्तियाँ, बाजार, कार्यशालाएँ और आवासीय क्षेत्र विकसित होते रहे। अतः मध्यकालीन मुगल भारत के व्यापारिक नगर गतिशील आर्थिक एवं सामाजिक संस्थाएँ थे। उनकी संरचना में बाजार और व्यापार के साथ उत्पादन, परिवहन, वित्त, प्रशासन और सामाजिक जीवन के अनेक पक्ष सम्मिलित थे। इन नगरों का अध्ययन मुगलकालीन अर्थव्यवस्था के क्षेत्रीय स्वरूप, व्यापारिक नेटवर्क और नगरीकरण की प्रक्रिया को समझने में महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है।

मध्यकालीन मुगल भारत में बाजारों के प्रकार

पूर्व-आधुनिक भारतीय बाजारों के दो प्रमुख उद्देश्य थे। पहला, स्थानीय उपयोग के लिए वस्तुओं का संग्रह करना और दूसरा, उन वस्तुओं को दूर-दराज के बाजारों में स्थित ग्राहकों तक पहुँचाना। इन दोनों भूमिकाओं के बीच कोई मूलभूत विरोध नहीं था। वास्तव में, ये दोनों कार्य एक ही भौतिक स्थान पर संचालित हो सकते थे और एक ही संगठन या संस्था द्वारा नियंत्रित किए जा सकते थे। दूसरी ओर, ऐसे स्थानों और व्यापारियों की संख्या बहुत कम थी जो केवल किसी एक प्रकार के बाजार से संबंधित होते थे। अधिकांश व्यापारी और बाजार स्थानीय तथा दूरस्थ दोनों प्रकार के व्यापार में भाग लेते थे।

इसके अतिरिक्त, भारतीय बाजारों में एक पदानुक्रमिक संरचना (Hierarchical Structure) भी विद्यमान थी। इस संरचना में सबसे नीचे छोटे ग्रामीण हाट (Haats) होते थे, जहाँ स्थानीय स्तर पर वस्तुओं का क्रय-विक्रय किया जाता था। इसके ऊपर क्षेत्रीय और नगरीय बाजार आते थे, जबकि सबसे ऊपरी स्तर पर सूरत और आगरा जैसे विशाल अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक केंद्र स्थित थे, जो देशी और विदेशी व्यापार के प्रमुख केंद्र थे।

जब इन दोनों आधारों—बाजारों के कार्य और उनके स्तर—को एक साथ देखा जाता है, तो भारतीय बाजारों को व्यापक रूप से चार प्रमुख प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है। ये बाजार स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति से लेकर अंतरराष्ट्रीय व्यापार तक विभिन्न आर्थिक गतिविधियों को संचालित करते थे और मध्यकालीन भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

- लंबी दूरी के व्यापार के लिए व्यापारिक केंद्र (Emporia) विकसित हुए थे, जो आंतरिक, स्थल मार्गीय या समुद्री व्यापार के प्रमुख केंद्र होते थे। इन बाजारों में दूर-दराज के क्षेत्रों से वस्तुओं का आदान-प्रदान किया जाता था और ये स्थानीय तथा अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक नेटवर्क से जुड़े होते थे।
- इसके अतिरिक्त, छोटे स्तर के बाजार (Small-scale Bazaars) भी मौजूद थे, जहाँ सीमित दूरी वाले क्षेत्रों से वस्तुओं को एकत्रित किया जाता था। इन बाजारों का मुख्य उद्देश्य स्थानीय उपभोग की आवश्यकताओं को पूरा करना था। इनके साथ-साथ मंडियाँ (Mandis) या थोक बाजार (Wholesale Markets) भी कार्य करती थीं, जहाँ बड़ी मात्रा में वस्तुओं का क्रय-विक्रय किया जाता था।
- अस्थायी मेले (Intermittent Fairs) भी मध्यकालीन बाजार व्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा थे। इन मेलों में विशेष प्रकार के व्यापारी एकत्रित होते थे, जो अपनी वस्तुओं की बिक्री करते थे और अपने व्यापारिक भंडार को पुनः भरते थे। हालांकि, इन मेलों में केवल व्यापारी ही भाग नहीं लेते थे, बल्कि सामान्य उपभोक्ताओं को भी खरीद-बिक्री की सुविधा उपलब्ध होती थी।

- इसके अलावा, वास्तविक पृथक ग्रामीण बाजार (Isolated Rural Markets) भी पाए जाते थे, जहाँ स्थानीय अतिरिक्त उत्पादन का आदान-प्रदान उन लोगों के बीच होता था जो स्वयं उत्पादक भी थे और उपभोक्ता भी। इन बाजारों में ग्रामीण समुदाय अपनी कृषि उपज और अन्य स्थानीय वस्तुओं का विनिमय करते थे तथा ये बाजार ग्रामीण अर्थव्यवस्था की मूल आवश्यकताओं को पूरा करने में सहायक होते थे।
- भारत के वाणिज्यिक केंद्रों (Commercial Emporia) में होने वाले बहुपक्षीय व्यापार को समझाने के लिए भौगोलिक और राजनीतिक कारक संभवतः "प्रमुख नोडल बाजारों (Primary Nodal Markets)" की अवधारणा की तुलना में अधिक उपयुक्त व्याख्या प्रदान करते हैं। इस अवधारणा का उपयोग उन बड़े व्यापारिक बाजारों का वर्णन करने के लिए किया गया है, जो विभिन्न स्थानों पर स्थित उत्पादन केंद्रों और उपभोग केंद्रों के बीच "मध्यस्थ (Intermediaries)" के रूप में कार्य करते थे।
- आगरा जैसे आंतरिक व्यापारिक बाजार अपनी केंद्रीय भौगोलिक स्थिति, विशाल बाजार और व्यापारियों के बीच लेन-देन की सुविधाओं के कारण विश्व के विभिन्न भागों से व्यापारियों को आकर्षित करते थे। इसी प्रकार, बंदरगाह नगर भी महत्वपूर्ण व्यापारिक केंद्रों के रूप में विकसित हुए, जहाँ तटीय क्षेत्रों से आने वाली वस्तुओं का संग्रह किया जाता था और आंतरिक क्षेत्रों में उत्पादित वस्तुओं को बाहर भेजा जाता था।
- इन बड़े व्यापारिक केंद्रों में मुख्य रूप से तीन प्रकार के बाजार पाए जाते थे—

स्थानीय बाजार (Local Market):

- यह बाजार मुख्य रूप से नगर में रहने वाली स्थानीय जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करता था। इसमें दैनिक उपयोग की वस्तुओं का क्रय-विक्रय किया जाता था।
-
- थोक स्थान बाजार (Wholesale Spot Market):
- यह बाजार खुदरा व्यापार और बड़े व्यापारिक लेन-देन दोनों की आवश्यकताओं को पूरा करता था। यहाँ व्यापारी बड़ी मात्रा में वस्तुओं की खरीद-बिक्री करते थे, जिन्हें बाद में स्थानीय बाजारों और खुदरा दुकानों तक पहुँचाया जाता था।
- बाजार और अंतर-क्षेत्रीय व्यापार केंद्र (Bazaar and Inter-regional Trade Market):
- यह बाजार विभिन्न क्षेत्रों के बीच व्यापार को संचालित करता था। इसके अंतर्गत क्षेत्रीय व्यापारिक गतिविधियाँ होती थीं और इसी से आगे विकसित होकर थोक अग्रिम बाजार (Wholesale Forward Market) का निर्माण हुआ, जहाँ भविष्य की आपूर्ति और बड़े व्यापारिक सौदों की व्यवस्था की जाती थी।
- इस प्रकार, मुगलकालीन भारत के व्यापारिक नगर केवल वस्तुओं के आदान-प्रदान के स्थान नहीं थे, बल्कि वे उत्पादन, वितरण और अंतर-क्षेत्रीय व्यापार के महत्वपूर्ण केंद्र थे, जिन्होंने भारतीय अर्थव्यवस्था को व्यापक व्यापारिक नेटवर्क से जोड़ा।

बाजार के दिन (Market Days)

मध्यकालीन बाजार सामान्यतः सुबह सूर्योदय के तुरंत बाद खुलते थे और सूर्यास्त से ठीक पहले बंद हो जाते थे। व्यापारी दिन के मध्य में भोजन करने के लिए अपने कार्य से कुछ समय का अवकाश लेते थे और अपनी दुकानों के दरवाजे बंद कर देते थे। बनिया समुदाय (Banias) के लोग गुरुवार को अपना साप्ताहिक अवकाश या त्योहार मनाते थे, जबकि मुस्लिम व्यापारी शुक्रवार को अवकाश रखते थे।

भुगतान व्यवस्था (Payment System)

मध्यकालीन बाजारों में वस्तुओं के भुगतान के तीन प्रमुख तरीके प्रचलित थे—

- तुरंत नकद भुगतान (Cash Payment)
- वस्तु विनिमय प्रणाली (Barter System)
- उधार या ऋण पर भुगतान (Credit Payment)

उस समय के लोगों के विवरणों से यह स्पष्ट होता है कि तत्काल नकद भुगतान सबसे सामान्य और प्रचलित तरीका था। यदि किसी खरीदार के पास लेन-देन के समय पर्याप्त नकदी उपलब्ध नहीं होती थी, तो वह व्यापारिक नियमों के अंतर्गत उधार या वस्तु विनिमय के माध्यम से भुगतान कर सकता था।

वस्तु विनिमय प्रणाली (Barter System) में ऐसी वस्तुओं का आदान-प्रदान किया जाता था जिनका बाजार मूल्य निश्चित होता था। यह प्रणाली विशेष रूप से स्थानीय और आवधिक बाजारों में छोटे लेन-देन के लिए अधिक लोकप्रिय थी। हालांकि, बड़े स्तर पर यह अक्सर ऐसी वस्तुओं को बेचने का एकमात्र साधन बन जाती थी जो खराब होने वाली या लंबे समय तक न रखी जा सकने वाली होती थीं।

दूसरी ओर, उधार पर खरीदारी (Credit Purchase) करने के लिए एक विश्वसनीय और प्रमाणित गारंटी आवश्यक होती थी। इसके लिए खरीदार द्वारा लिखित वचन-पत्र प्रस्तुत किया जाता था, जिस पर खरीदार, काजी (Qazi) और गवाहों के हस्ताक्षर होते थे। इस दस्तावेज में भुगतान की निश्चित तिथि, भुगतान की विधि और देरी होने पर लगाए जाने वाले ब्याज की शर्तें स्पष्ट रूप से दर्ज की जाती थीं।

इस प्रकार, मध्यकालीन मुगल भारत में बाजारों में भुगतान की विभिन्न प्रणालियाँ प्रचलित थीं, जिनमें नकद लेन-देन सबसे प्रमुख था, जबकि वस्तु विनिमय और ऋण व्यवस्था विशेष परिस्थितियों में व्यापार को सुचारु बनाए रखने में सहायक होती थीं।

परिवहन

परिवहन के साधन के रूप में परिवहन व्यवस्था का विकास नगरीकरण की प्रगति में एक विशेष स्थान रखता है। संचार और परिवहन के बुनियादी ढाँचे का स्तर नगरीय योजना की सफलता का एक उचित मापदंड माना जा सकता है। नगरीय विकास के प्रारंभिक चरणों में नगरों का महत्व मुख्य रूप से स्थानीय स्तर तक सीमित होता था, जब नगरों से निकलने वाले कच्चे मार्ग आसपास के गाँवों तक पहुँचते थे। इस अवस्था में नगर आकार और जनसंख्या दोनों में छोटे होते थे तथा उनका व्यापार और उद्योग भी सीमित स्तर पर होता था, जिसमें केवल स्थानीय उत्पादक और उपभोक्ता ही शामिल होते थे। इस समय नगरों की परिवहन व्यवस्था धीमी होती थी, आवागमन कम होता था और सड़कें मुख्य रूप से नगर को आसपास के अन्य नगरों से जोड़ने का कार्य करती थीं। जब नगर का आकार, जनसंख्या, व्यापार, उद्योग और अन्य गतिविधियाँ बढ़कर क्षेत्रीय महत्व प्राप्त कर लेती थीं, तब वह विकास के दूसरे चरण में प्रवेश करता था। इस अवस्था में नगर की आंतरिक और बाहरी सड़कों का रखरखाव अत्यंत आवश्यक हो जाता था तथा ऐसी प्रभावी परिवहन व्यवस्था विकसित करनी पड़ती थी जिससे यात्रियों को कम से कम कठिनाई हो। लंबी दूरी के मार्गों का निर्माण आवश्यक था, जिन पर यात्रियों को पर्याप्त सुरक्षा, विश्राम स्थल, छाया और रास्ते में अनावश्यक करों से मुक्ति प्राप्त हो सके। ये मार्ग नगरों से निकलकर विभिन्न दिशाओं में फैलते थे और रास्ते में आने वाले महत्वपूर्ण नगरों को जोड़ते हुए अंततः निर्यात केंद्रों तक पहुँचते थे। बेहतर संचार और परिवहन सुविधाओं के कारण नगरों का महत्व बढ़कर साम्राज्यिक या राष्ट्रीय स्तर तक पहुँच गया।

मध्यकाल में केवल सड़क का निर्माण करना पर्याप्त नहीं था। यात्रियों को डाकुओं और असुरक्षित परिस्थितियों से सुरक्षा प्रदान करना, मौसम की कठिनाइयों से बचाना, प्रत्येक पड़ाव पर आरामदायक आवास उपलब्ध कराना और यात्रा के दौरान जल की व्यवस्था करना भी आवश्यक था। इसी उद्देश्य से

इन मार्गों पर निश्चित स्थानों पर सरायों (Sarais) का निर्माण किया गया, जिनका रखरखाव राज्य द्वारा किया जाता था। ये सराय यात्रियों और व्यापारियों को सुरक्षा तथा सुविधाएँ प्रदान करने के लिए बनाई गई थीं। इन सरायों में रहने के स्थान, जल स्रोत, मस्जिदें, मुअज्जिन, इमाम, मुस्लिम और हिंदू धार्मिक संस्थाओं के लिए स्थान तथा पशुओं के लिए चारा उपलब्ध होता था। इन सरायों में वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें सामान्यतः कम रखी जाती थीं। इस्लामी इतिहास में मुस्लिम शासकों द्वारा सरायों के निर्माण की परंपरा रही थी। नगरों के भीतर निर्मित सरायों के अतिरिक्त, प्रमुख सड़कों के किनारे निश्चित अंतराल पर भी इसी प्रकार की सरायों की श्रृंखला विकसित की गई। आधुनिक यात्रियों के मार्ग विवरणों से यह स्पष्ट होता है कि उष्णकटिबंधीय जलवायु के कारण जल की व्यवस्था कम दूरी पर ही की जाती थी, जिसे या तो राज्य द्वारा या कुछ समृद्ध अमीरों की उदारता से स्थापित किया जाता था। उदाहरण के लिए, आगरा-अजमेर मार्ग पर प्रत्येक कोस की दूरी पर एक कुआँ खुदवाया गया था। इनमें से कुछ कुएँ बावड़ियाँ (Step Wells) थीं, जो न केवल जल प्राप्ति का साधन थीं बल्कि थके हुए यात्रियों के विश्राम स्थल के रूप में भी कार्य करती थीं।

सम्राट अकबर ने साम्राज्य के जल मार्गों और सीमावर्ती क्षेत्रों पर व्यापारिक वस्तुओं से लिए जाने वाले करों की व्यवस्था को सुव्यवस्थित किया था। उन्होंने भूमि मार्गों से आने-जाने वाली वस्तुओं पर लगाए गए आयात करों को समाप्त कर दिया ताकि व्यापार का प्रवाह स्वतंत्र और बाधा रहित बना रहे। इसी प्रकार, सम्राट जहाँगीर ने एक फरमान जारी करके काबुल और कंधार के बीच भूमि मार्गों से यात्रा करने वाले व्यापारियों और सौदागरों पर लगाए जाने वाले अतिरिक्त करों (Cesses) को प्रतिबंधित किया। औरंगज़ेब आलमगीर ने भी इसी प्रकार व्यापारियों और यात्रियों की सुविधा के लिए कर संबंधी रियायतें प्रदान कीं। इस प्रकार, मुगल शासकों द्वारा विकसित परिवहन व्यवस्था, सड़क निर्माण, सरायों और सुरक्षा उपायों ने व्यापार, नगरीकरण और आर्थिक विकास को महत्वपूर्ण रूप से बढ़ावा दिया।

निष्कर्ष

मध्यकालीन मुगल भारत के व्यापारिक नगर आर्थिक जीवन की सक्रिय और गतिशील इकाइयाँ थे। इनका विकास राजनीतिक सत्ता, भौगोलिक स्थिति, कृषि उत्पादन, शिल्प, व्यापारिक मार्गों और बाजार की आवश्यकताओं के संयुक्त प्रभाव से हुआ। आगरा, दिल्ली, लाहौर, अहमदाबाद, सूरत, बनारस और पटना जैसे नगरों ने अलग-अलग प्रकार की व्यापारिक एवं उत्पादन गतिविधियों के आधार पर अपनी विशिष्ट पहचान बनाई। बाजार, मंडियाँ, सराय, गोदाम, कार्यशालाएँ और परिवहन मार्ग इन नगरों की भौतिक एवं आर्थिक संरचना के प्रमुख अंग थे। व्यापारियों, साहूकारों, कारीगरों, श्रमिकों और परिवहनकर्ताओं की सक्रियता ने इनके सामाजिक जीवन को भी प्रभावित किया। व्यापारिक गतिविधियों ने विभिन्न क्षेत्रों के लोगों को नगरों में आकर्षित किया, जिससे सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता का विस्तार हुआ। आंतरिक व्यापार के साथ समुद्री व्यापार ने कुछ नगरों को व्यापक अंतरक्षेत्रीय और अंतरराष्ट्रीय नेटवर्क से जोड़ा। मुगल प्रशासन द्वारा मार्गों की सुरक्षा, बाजार व्यवस्था तथा आधारभूत सुविधाओं को प्रदान किया गया संरक्षण भी व्यापारिक गतिविधियों के विस्तार में सहायक रहा। इस प्रकार मुगलकालीन व्यापारिक नगर केवल आर्थिक विनिमय के केंद्र नहीं थे, बल्कि वे उत्पादन, वितरण, वित्त, सामाजिक संपर्क और सांस्कृतिक आदान-प्रदान के व्यापक केंद्र थे।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. मालेकंदधिल, पायस। (2012)। समुद्री इतिहास, हिंद महासागर और बंदरगाह नगर: पूर्व-आधुनिक भारत में शहरी क्षेत्रों की बदलती गतिशीलता। अटना जर्नल ऑफ टूरिज्म स्टडीज। 15(2), 115-147।
2. मुनीर, तैयबा एवं हिना, गुल-ए। (2013)। दरबार और तट: मुगल-पुर्तगाली संबंध (1498-1700)। पाकिस्तान जर्नल ऑफ सोशल रिसर्च। 04(2), 1039-1047।

3. मुगल, रूबा बाबर। (2014)। भारतीय उपमहाद्वीप में मुगल वास्तुकला और एक अद्भुत युग की महत्वपूर्ण समाधि संरचनाओं का अवलोकन। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी एंड करंट रिसर्च। 11(6), 450-457।
4. उपलेकर कुशे, कृपाली एवं डैनी, ऐजियन एवं एंडर्स, सेलेना एवं इवा, डोकोनाल एवं जिल, कपाड़िया। (2010)। मुगल मकबरो का इतिहास, स्वरूप और पूर्ण अनुपात: ताजमहल के निर्माण का रहस्य। आर्कनेट-आईजेएआर: इंटरनेशनल जर्नल ऑफ आर्किटेक्चरल रिसर्च। 4(1), 158-178।
5. सिंह, अमन। (2011)। मुगल विरासत का संरक्षण: हुमायूँ के मकबरे के संरक्षण का ऐतिहासिक विश्लेषण। इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड रिसर्च। 15(1), 249-255।
6. मुबीन, सज्जाद एवं गिलानी, आई. एवं हसन, डब्ल्यू। (2014)। लाहौर शहर के मुगल उद्यान – शालीमार उद्यान का एक अध्ययन। 65(4), 511-522।
7. नवाज, मुहम्मद एवं खिलत, फैका। (2011)। लाहौर के चारदीवारी वाले शहर की शहरी विरासत: आलोचनात्मक विश्लेषण और नीति के लिए आगे की दिशा। जर्नल ऑफ आर्किटेक्चरल एंड प्लानिंग रिसर्च। 36(4), 289-302।
8. खासखेली, राबिया एवं वीपिंग झांग एवं शार, भाई एवं मरवी, हिना। (2013)। मुगल वास्तुकला में प्रतिनिधित्व: लाहौर के शालीमार उद्यान, लाहौर किले के उद्यान और वाह उद्यान का संदर्भात्मक विश्लेषण। जर्नल ऑफ रिसर्च इन आर्किटेक्चर एंड प्लानिंग। 32(2), 13-27।